परम ब्रह्म स्वरूप प्रदीप्त भास्कर श्रीश्रीतैलंग स्वामी

श्रीश्रीमाँ सर्वाणी

साधो, अलख निरंजन सोई।
गुरुपरताप रामरस निर्मल, और ना दूजा कोई,
सकल ज्ञान पर ज्ञान दयानिधि, सकल जोती पर जोती,
जाके ध्यान सहज अघनासै, सहज मिटै जम छोती।।

–दरिया साहब

परमब्रह्म स्वरूप का एक नाम है ''अलख-निरंजन''। ''अलख'' का अर्थ है विशुद्ध जड़ चैतन्य जो कि सकल ज्योति का आदि उत्स है और एक दिव्य ज्योति है। इसी के मध्य है आत्मसत्ता का निमज्जन या विसर्जन जो निर्विकल्प महानिर्वाण समाधि पद है एवं जो परमब्रह्म स्वरूप की एक नित्य एवं अक्षय अवस्था विशेष है। इसी अलख-निरंजन रूपी परमब्रह्म पद को स्थूल सत्ता में अवतरण करवाकर सचल शिवरूप में प्राय: दो कल्प से अधिक समय तक सशरीर जीवनमुक्त भगवत्वेत्ता महात्मा परमब्रह्म स्वरूप प्रदीप्त भास्कर एवं काशी के सचलशिव श्रीश्री तैलंगस्वामी जी विराजित थे। पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के अवतार श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभु के आविर्भाव के कुछ समय पश्चात् ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मर्षि ऋषि श्रेष्ठ कृष्ण-स्वारूप्य-लभ्य महात्मा वशिष्ठावतार श्रीश्रीतैलंग स्वामी अव्यक्त भाव में, सर्वव्यापी जगन्नाथदेव के ऐश्वर्यमण्डित होकर, सनातन धर्म की रक्षा हेतु आविर्भूत हुए। युगों-युगों से ब्रह्माण्ड के समग्र महात्मा-देवात्मामण्डल में ये एक अति सुपरिचित व्यक्तित्व थे। इसीलिए आत्मोपलब्धि के आसन पर उपवेशित होकर ''मम्'' शिवगुरु सदृश चिरन्तन इस महावतार का जन्म-जन्मान्तर का आलेख्य आज समग्र जगत्वासियों के सम्मुख प्रस्तुत करने को मैं उद्यत हुई हूँ जिससे कि मानवमात्र में श्रद्धाभक्ति एवं भगवत्चेतना उत्तरोत्तर वर्द्धित हो और पावन धरा के इन दुर्दिनों में उनका आशीर्वाद वर्षित हो!

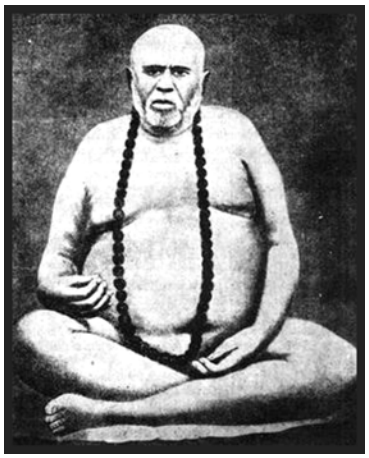

साक्षात् परमेश्वर के प्रतिभू महात्मा तैलंगस्वामी का लीला काल प्राय: ३०० वर्ष तक चला। इनके जीवनकाल में भारतवर्ष के अनेकों तीर्थों पर एक अलौकिक योग विभूति सम्पन्न योगैश्वर्यशाली विस्मयकारी शक्तिधर महात्मा के रूप में इनके दर्शनों के उल्लेख सर्व विदित हैं परन्तु अवशेष में उनका जीवनवेध लीला माधुर्य प्रमाणित करता है कि वे यथार्थ में ही काशी-वाराणसी के सचल विश्वनाथ हैं। उनके इस सुदीर्घ जीवन-लीला काल में उन्हें श्रीश्री जगन्नाथपद के अंशावतार के रूप में श्रीश्रीबलराम-शक्तिपद पर आसीन होकर, समय-समय पर, विभिन्न स्थानों पर, विभिन्न देह धारण पूर्वक, जगत् को एवं जीव को सनातन सत्य धर्म की शिक्षा प्रदान करते देखा गया। जैसे-पुरुषोत्तम श्रीराम रूप का महात्म्य जनसाधारण में प्रचार करने हेतु उत्तर भारत में गोस्वामी तुलसीदास के रूप में उन्होंने ''रामचरित मानस'' की रचना की एवं बाद में महात्मा जनार्द्दनी के नाम से उन्होंने ही उत्तर प्रदेश में 'राम महिमा' के गुण गाये। तत्पूर्व बंगाल में ''कृत्तिवास ओझा'' के रूप में जन्मग्रहण कर ''कृत्तिवासी रामायण'' की रचना के माध्यम से बंगाल के गाँव-गाँव में नवधा भक्ति साधना की धारा में 'श्रीराम रस निर्मल जस' गाथा का प्रचार किया। दूसरी ओर श्रीचैतन्यदेव के पूर्व में वैष्णव आराधना में नियुक्त 'श्रीश्रीराधाकृष्ण धामतृष्ण' का स्वारूप्य लब्ध करने हेतु ''श्रीश्री गीत गोविन्दम् एवं पद्मावती'' काव्य के रचयिता कवि जयदेव के रूप में वे आविर्भूत हुए। इसके पश्चात् महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव के परवर्ती समय गोविन्ददास कविराज एवं इसके भी परवर्ती काल में इनका आविर्भाव हुआ ''वासुली देवी'' के उपासक द्विज चण्डीदास के रूप में। द्विज चण्डीदास के जीवन में शाक्त एवं वैष्णव साधना का समन्वय देखा गया। साधना की धारा में वे कवि-कंकन रामप्रसाद सेन, कमलाकांत दाशरथिराय, गया के साधक पराशर एवं अवशेष में युगावतार वरिष्ठ आध्यात्मिक जगत् के नवजागरण के सूचक श्रीश्रीरामकृष्ण परमहंसदेव के स्वरूप में थे।

काशी में श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव के समय श्री जगन्नाथ–श्री बलराम सत्ताद्वय का महामिलन श्रीश्री तैलंग

स्वामी एवं श्रीश्रीरामकृष्ण परमहंस के पावन सान्निध्य से घटित हुआ। इसीसमय दूसरी ओर पूर्वापर पूर्णब्रह्म सनातन सत्तारूपी पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण का पुनः धराधाम पर आविर्भाव हुआ महा महा-प्रभु जगत्बन्धु सुन्दर के रूप में इस बंगभूमि पर। इस अति शुभ सन्धिक्षण के कुछ समय के बीच में श्रीतैलंग स्वामी के कुछ पूर्व में श्रीश्रीरामकृष्ण परमहंसदेव ने मर्त्यलीला संवरण की, ऐसा ही घटना प्रवाह उल्लिखित है। योगी सम्राट श्रीश्रीबाबाजी महाराज की असीम अनुकम्पा से श्रीमद्भगवद्गीता के 'सम्भवामि युगे युगे' का तात्पर्य विश्लेषण कर आज आध्यात्मिक जगत् के अन्तर्निहित रहस्य को संक्षेप में विश्ववासी भक्तजनों के सम्मुख व्यक्त कर रही हूँ।

महात्मा तैलंग स्वामी के सुदीर्घकाल व्यापी जीवन में इस जगत् में अवस्थिति के समय धर्म जगत् के विभिन्न महाबली विराट् महात्माओं का एक-एक करके अवतरण हुआ, जिनमें अधिकांश ही सचल शिवब्रह्म श्रीतैलंग स्वामी के चिन्मय आलोक से किसी न किसी रूप में आलोकित हुए। यथा, एकदा श्रीश्रीतैलंग स्वामीजी ने विजयकृष्ण गोस्वामी प्रभु से कहा, ''आओ, तुम्हें दीक्षा देनी है।'' विजयकृष्ण ने कहा, ''मैं ब्राह्म हूँ, मुझे आप क्या दीक्षा देंगे? इसके अलावा आप जैसे अनाचारी से मैं दीक्षा नहीं लूँगा।'' तैलंगस्वामी शान्तभाव से हँसकर कहने लगे –''बेटा, तुम्हें दीक्षा देने के पीछे कुछ गूढ़ रहस्य है। मैं जानता हूँ कि मैं तुम्हारा प्रकृत गुरु नहीं हूँ परन्तु दीक्षा नहीं लेने से शरीर शुद्ध नहीं होता है, इसीलिए मैं यह कार्य करना चाहता हूँ, आओ'' कहकर विजयकृष्ण को त्रिविध मंत्र से दीक्षित किया और कहा, ''अब जाओ, भगवान ने मुझे जो हुक्म दिया था, मैंने उसपर अमल किया है। – अर्थात् अक्षय वटवृक्ष के क्षुद्रपेड़ को महात्मा तैलंगस्वामी ने नाम मंत्र के द्वारा शक्ति से घेर दिया जिससे कि कोई भी अमंगल घटित न हो। इसीप्रकार कई महात्माओं के जीवन में महात्मा तैलंगस्वामी जी की अशेष कृपा कल्याण-आशीष वर्षित होती रहती थी।

महात्मा तैलंगस्वामी के साथ परमहंस श्रीरामकृष्णदेव के साक्षात्कार का दृश्य भी आध्यात्मिक दृष्टिभंगि से काफी गुरुत्वपूर्ण है। तैलंगस्वामीजी की मानसी कन्या शंकरीमाताजी के पवित्र जीवनी ग्रन्थ से ज्ञात हुआ जा सकता है कि – सन् १८६८ में श्रीरामकृष्ण, मथुरबाबु और भानजे हृदय के साथ काशी आये। काशी विश्वनाथ का दर्शन कर श्रीरामकृष्ण मणिकर्णिका घाट पर 'सचल विश्वनाथ' का दर्शन करने हेतु उद्यत हुए। शंकरी माताजी भी इस समय हिमालय से लौटकर तैलंगस्वामी की साधना-कुटीर में ही अवस्थान कर रही थी। स्वामीजी के सेवक मंगल भट्ट ने आकर उसदिन शंकरी माताजी से कहा कि स्वामी जी से मिलने एक बंगाली साधु आए हैं और बाबा ने उन्हें ऊपर बुला लिया है। शंकरी माताजी भी अपने गुरुजी से आदेश लेकर ऊपर गई। वहाँ जाकर देखा कि एक क्षुद्रकाय उज्ज्वल द्युतिमान गुणसम्पन्न बंगाली साधु स्वामीजी से वार्तालाप कर रहे हैं। उनके साथ और एक बंगाली सज्जन हैं। परिचय पाने के बाद माताजी ने जाना कि ये ही श्रीश्रीरामकृष्ण-परमहंसदेव और इनके सहयोगी जमींदार मथुरनाथ विश्वास हैं। वहाँ आलोचना का विषय था– ''भगवान एक हैं या दो?'' यह प्रश्न रामकृष्ण देव ने पहले तर्जनी और फिर दो अंगुली दिखाकर किया। प्रत्युत्तर में स्वामीजी ने भी तर्जनी दिखाकर ईशारे से कहा, ''जब साधक का मन आत्मा में विलीन हो समाधिमग्न होता है तब 'एक' के अलावा दूसरा कुछ नहीं रहता। इसे ही 'अद्वैतवाद' कहा गया है। दूसरी ओर मन जब ईश्वर साधना हेतु साधना में तत्पर होता है तब यह दो हो जाता है अर्थात् भक्त और भगवान। इसी को 'द्वैतवाद' कहा गया है। भगवान एक हो या दो पर मूल में एक ही है। छिलके के भीतर चना एक और छिलका हटाने पर दो हिस्सों में होता है, यही इसका उपयुक्त उदाहरण है।'' श्रीमत् मंगलभट्टजी ने स्वामीजी के इशारे का मर्मार्थ व्याख्या कर समझा दिया। साधारणतः मंगलभट्टजी ही नवागत भक्तों एवं दर्शनार्थियों को स्वामीजी के ईशारों का मर्मार्थ व्याख्या कर समझा देते थे। स्वामीजी भी उनकी व्याख्या का समर्थन करते।

रामकृष्णदेव –''धर्म क्या है?'' स्वामीजी –''सत्य।''

रामकृष्णदेव –''जीव का कर्म क्या है?'' स्वामीजी –''जीव सेवा।''

रामकृष्णदेव – ''प्रेम क्या है?'' स्वामीजी – ''भगवान के नाम में तन्मय होकर जब आँखों से प्रेमाश्रु बहते हैं उस अवस्था का नाम है 'प्रेम'।'' तैलंगस्वामी की निश्चल योगमूर्ति के दर्शन एवं युक्तिपूर्ण अपूर्व व्याख्या से रामकृष्णदेव को भाव समाधि हुई। इसी भावसमाधि में ही उन्होंने एकदूसरे की अभेद सत्ता की उपलब्धि की थी (यह

सरोजबाबा से सुना है)। उनके दोनों चक्षुओं से प्रेमाश्रु बहने लगे। स्वामीजी ने इशारे से पंखा झलने का आदेश दिया और शंकरी माताजी ने उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर उन्हें पंखा झलना शुरु कर दिया। थोड़ी देर के बाद समाधि भंग होने पर रामकृष्णदेव ने तैलंगस्वामी जी के आसन-वेदी की प्रदक्षिणा की और दोनों हाथ उठाकर आनन्द से अभिभूत होकर नाचने लगे। बाद में मथुरबाबु से खीर मंगवाकर स्वामीजी को अपने हाथों से आहार कराया। मुस्कुराहट भरे चेहरे से स्वामीजी ने परमहंसदेव को एक सोने का नसवार का डिब्बा भेंट किया; तब दोनों ही भाव-विभोर होकर प्रेमानन्द रूपी सच्चिदानन्द सागर में गोता लगाने लगे।

तन्त्रयोगमार्ग एवं वेदान्तयोगमार्ग - साधना की इन दोनों धाराओं में स्वयं सम्पूर्ण प्रतिभात अलख निरंजन रूपी काशी के सचल विश्वनाथ शिवब्रह्म श्रीश्रीतैलंगस्वामी का जीवन अध्यात्ममार्ग के साधन जगत् में एक अमूल्य निदर्शन है एवं ऐसा सचराचर दृष्टिगोचर होना असम्भव है।

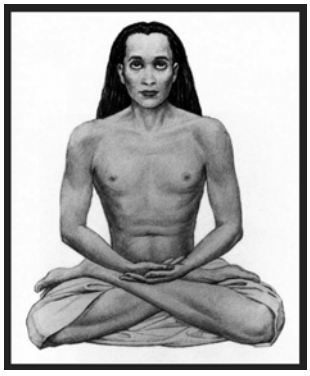

श्रीश्रीबाबाजी महाराज

परमयोगीश्वर महामुनि श्रीश्रीबाबाजी महाराज के कृपाधन्य श्रीमाणिकलाल दत्त महाशय की दैनन्दिनी (डायरी) ''दि रेड बुक'' एवं जीवनाभास नामक पुस्तिका में लिखा है कि दत्त महाशय के पितामह कालीचरण दत्त थे, जो कालान्तर में मोतियों के व्यापारी होने की वजह से 'काली मुक्तावाला' नाम से विशद् रूप में परिचित हुए। वे महावतार बाबाजी महाराज के असीम कृपापात्र थे। एकदिन कालीचरण कलकत्ता स्थित अपनी दुकान पर बैठे थे। उसी समय उनकी दुकान के दरवाजे के पास एक सन्यासी का आगमन हुआ। उन्होंने कालीचरण से कहा, ''क्यों, चलना नहीं है?'' कालीचरण ने उत्तर दिया- ''चलने को तैयार हूँ प्रभु।'' ''तब चलो मेरे संग'' – कहकर साधु जिस ओर अग्रसर हुए, मंत्रमुग्ध कालीचरण भी उनका अनुसरण करने लगे। दुकान खुली की खुली पड़ी रही और पड़ा रह गया वहीं पर उनका कैश-बाक्स चाबियों समेत। उनके कर्मचारियों का उनसे कुछ भी कहने का साहस नहीं हुआ। उनका प्रिय द्वितीय पुत्र श्यामाचरण उससमय कलकत्ता शहर से २३ मील दूर चुंचुड़ा शहर गया हुआ था। इस घटना के एक सप्ताह के बाद वाराणसी धाम से श्यामाचरण को अपने पिता द्वारा स्वहस्त लिखा एक पत्र हस्तगत हुआ। पत्र में कालीचरण ने अपने स्नेहभाजन पुत्र श्यामाचरण को लिखा, ''मैं गुरुजी के आदेश से उनके साथ चला आया हूँ, मुझे खोजने की चेष्टा मत करना, मेरा पता तुम्हें नहीं मिलेगा।'' बाद में पत्र के ऊपर पोस्ट ऑफिस की मोहर देखकर वाराणसी की ओर श्यामाचरण रवाना हुए। उनका उद्देश्य था पिता का सन्धान प्राप्त कर उन्हें घर लौटाकर लाना। 'वाराणसी धाम' पहुँचकर अन्तर में व्याकुलता लिए साधु-सन्तों के आश्रम, चोटी एवं नाना धार्मिक प्रतिष्ठानों में घुमते-घुमते तीर्थों के प्रभाव से स्वयं उनमें ही वैराग्य भाव प्रगट हुआ। उन्हें आत्मिक उत्कर्षता प्राप्त होने लगी जिसके फलस्वरूप काशीधाम के शिवबाबा श्रीतैलंग स्वामीजी से उन्होंने दीक्षा ग्रहण की और उनके शरणागत हुए। कालान्तर में साधु संग से प्रभावित होकर जटाजुटधारी श्यामाचरण ने १२ वर्ष के लम्बे अन्तराल के बाद स्वगृह में पुनराय प्रत्यावर्त्तन किया।

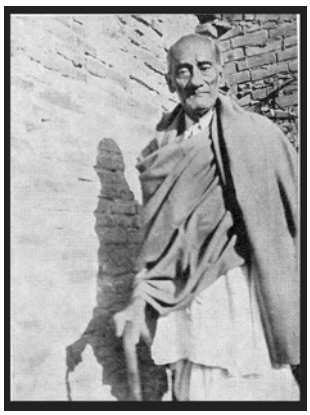

श्रीमाणिकलाल दत्त

ईश्वरकोटि महात्माओं का जन्म और कर्म उभय दैवसम्भूत होते हैं। श्यामाचरण के पुत्र माणिकलाल के जन्म के पूर्व योगीप्रवर तैलंगस्वामीजी ने उन्हें यह दैववाणी सुनाई थी कि उनके गृह में 'धनु राशि' की लीला होगी। दैववाणी का कुछ समय अतिक्रम होने के बाद श्यामाचरण के गृह में माणिकलाल का पुण्य आविर्भाव हुआ एवं कालान्तर में जन्मचक्र विचार करने पर उनकी राशि 'धनु' पाई गई। इसप्रकार तैलंगस्वामी की भविष्यवाणी सत्य रूप में प्रकटित हुई। हिन्दू शास्त्रों की कथाऐं द्वार्थक हैं – अन्तर और बाहर। वहिर्जगत् के ज्योतिष शास्त्रविदों ने 'धनु' राशि के गुण - अवगुणों को विभिन्न प्रकार से लिपिबद्ध किया है। अन्तर्जगत् में इसका अर्थ है भगवान में अनुगत 'मन' जब

अणु सदृश आत्मज्ञानलब्ध होता है तब 'मनु' कहकर परिगणित होने पर उस मनःचेतना में श्रीभगवान की अमृतवाणी 'ध्वनित' होती है एवं तब वह 'धनु' नाम धारण करता है। द्वापर में इस 'धनु' को महावीर धनुर्धर पार्थ ने धारण किया था। इसीलिए श्रीकृष्ण भगवान ने गीता में कहा है, ''यत्र योगेश्वर कृष्णो ततः पार्थो धनुर्धर।

धर्मानुरागी पितामह कालीचरण दत्त महाशय की गुरुप्राप्ति, गुरुदीक्षा एवं गुरुपरिचय का प्रमाण कहीं न मिलने पर भी उनकी कलकत्ते की दुकान के कर्मचारी एवं उनके पुत्र श्यामाचरण से जो वृत्तान्त प्राप्त हुआ है वह यह है कि माणिकलाल के जन्म के पूर्व ही कालीचरण ने संसार त्यागी होकर जिस महापुरुष का अनुगमन किया उन्होंने ही परवर्तीकाल में एक महालग्न में माणिकलाल के प्रति अशेष कृपापरवश होकर उसे शिष्यत्व प्रदान किया। ये अलौकिक पुरुष और कोई नहीं बल्कि महावतार बाबाजी महाराज ही थे। इसीतरह से जन समाज के नेपथ्य में इन दो भगवत्कल्प महापुरुषों के जनकल्याण के कर्म सम्मिलित धारा में आज भी चले आ रहे हैं।

इस सृष्टि मध्य ब्रह्मवेत्ता नित्यसिद्ध महात्मागणों के सत्ताबोध का प्राणमय प्रवाह अथवा जीवनधारा का प्रवाह अवतारत्व के दृष्टिभंगि से सत्यदृष्टि द्वारा अवलोकन करने पर उपलब्धित् किया जाता है कि उन सब के जीवन-प्रवाह की धारा अविच्छेद्य हैं। एक ही समय में जगत् के प्रयोजन हेतु युगोपयोगी एक से अधिक शरीर धारण करते हुए कोई-कोई महात्मागण विश्वकल्याण कर्म में सर्वदा ही नियुक्त रहते हैं। वष्ठिावतार महात्मा तैलंगस्वामीजी उन सब परमकृपालु उदार महात्माओं के मध्य अन्यतम एवं श्रेष्ठतम एक जन हैं जिनके जगत्कल्याण का अवदान अनन्त, असीम में परिव्याप्त है।

हिन्दी अनुवाद–मातृचरणाश्रिता श्रीमती सुशीला सेठिया